International Research Journal of Human Resources and Social Sciences
Vol. 4, Issue 2, February 2017 Impact Factor- 5.414
ISSN(O): (2349-4085) ISSN(P): (2394-4218)
© Associated Asia Research Foundation (AARF)
Website: www.aarf.asia Email : editor@aarf.asia , editoraarf@gmail.com

"राजनीति में अपराधीकरण देश के लिए सबसे बड़ा संकट"

डॉ. लाखा राम चौधरी, पीएच.डी. (लोक प्रशासन)
महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर (राजस्थान)

आज विश्व भर में मानव मात्र के कल्याण के लिए किसी भी देश की शासन व्यवस्था के लिए लोकतान्त्रिक सरकार (जनता द्वारा चुनी हुई सरकार) का गठन सर्वोत्तम शासन प्रणाली माना जाता है। लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं के अनुसार हमारे यहाँ भी जनता के मतों द्वारा सरकार के प्रतिनिधियों का चुनाव किया जाता है। हमारे देश की जनता आजादी के समय अधिकतर अशिक्षित थी उसे यह भी समझ नहीं थी कि वोट डालने का क्या मतलब होता है। सदियों से विदेशी शासन में रहने की आदि हो चुकी जनता को कोई भी थोड़े से बाहुबल से आसानी से प्रभावित कर सकता था। अतः दबंगों ने जनता की इस कमजोरी का लाभ उठाकर, जनमत को अपने आका के हक में कर शासन पर अपनी पकड़ बना ली, यदि कोई व्यक्ति दबंग के काबू में नहीं आ पाता था तो उसे बहला फुसला कर कुछ प्रलोभन जैसे दारू तथा कुछ धन का लालच देकर वोट अपने पक्ष में डलवा लेते थे और चुनाव जीत जाते थे। जब कुछ नेता दबंगों का सहारा लेकर जीतने लगे तो अन्य प्रत्याशियों ने भी यही फॉर्मूला अपनाया। इस प्रकार चुनावों की बेला में दबंगों, अपराधियों की चांदी होने लगी और सत्ता में अपनी पकड़ बना लेने के कारण अपनी अपराधिक गतिविधियों को निर्भय होकर करने लगे। ये अपराधी या दबंग लोग ही आगे चल कर स्वयं भी चुनाव प्रक्रिया द्वारा चुनाव जीत लेने का दंभ भरने लगे और जीतने भी लगे। धीरे-धीरे सदन के पटल पर अनेक अपराधी दिखाई देने लगे। कभी-कभी तो जाने माने डकैत भी चुनाव जीत कर विधायिका का हिस्सा बन गए। **फूलन देवी** का नाम भी उल्लेखनीय है जो डकैत होते हुए भी चुनाव जीत कर सांसद बन गयी और जनता ने उसे जिताया यह भी आश्चर्यजनक विषय है। इसी प्रकार अनेक माफिया चुनाव जीत कर सरकार का हिस्सा बनने लगे। इससे प्रतीत होता है कि हमारे देश की जनता को फुसलाना, बरगलाना, धमकाना किसी हद तक संभव है। एक अपराधिक प्रवृति का व्यक्ति चुनाव लड़ता है तो चुनाव आयुक्त कुछ भी नहीं कर पाता, क्योंकि हमारे देश की न्यायिक व्यवस्था के अनुसार जब तक किसी व्यक्ति को अदालत द्वारा अपराधी साबित न कर दिया जाए, उसे अपराधी की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता। यही कारण है कि जब कोई भी उम्मीदवार अनेक अपराधों में लिप्त पाया जाता है और अदालतों में उस पर अनेक केस चल रहे होते हैं तो भी वे चुनाव जीत कर माननीय हो जाते हैं और बाद में मंत्री के पद को भी सुशोभित कर लेते हैं। अदालत के नियमों के अनुसार जब तक किसी व्यक्ति पर दोष सिद्ध नहीं हो जाता उसे अपराधी नहीं माना जा सकता, और वह चुनाव लड़ सकता है। अदालत के इसी सिद्धान्त के कारण अनके पेशेवर अपराधी भी मंत्री पद तक पहुँच जाते हैं। जब एक अपराधी मंत्री बन जायेगा तो वह कानून भी अपने हितों को ध्यान में रखकर ही बनाएगा और कुछ खामिया छोड़ देगा ताकि वह बाद में भी अपने अपराधिक कार्यो को अंजाम दे सके और उसका कुछ भी न बिगड़ पाए। यह हमारे चुनाव प्रक्रिया की कमी है कि चुनाव लड़ने के लिए कोई भी शैक्षणिक योग्यता निर्धारित नहीं है और न ही मंत्री बनने के लिए किसी विशेष योग्यता का प्रावधान है। जबकि देश के शासन में एक ही मंत्री बनने के लिए किसी विशेष योग्यता का प्रावधान होता है। यद्यपि संविधान निर्माण के समय अधिकतर जनता के शिक्षित न होने के कारण जनप्रतिनिधियों की न्यूनतम योग्यता निर्धारित करना प्रासंगिक नहीं था, उचित नहीं था, परंतु आज स्थिति पूर्ववत नहीं है। आज देश में साक्षरता का प्रतिशत काफी बढ़ चुका है, अतः अब कुशल प्रशासनिक क्षमता के लिए न्यूनतम शैक्षिक योग्यता निर्धारित करना आवश्यक हो गया है।

राजनीतिक दलों द्वारा उत्पन्न इस संकट से केवल भारत ही नहीं वरन् अमेरिका, रूस, फ्रांस, इटली, इंग्लैंड इत्यादि दुनिया के बड़े-बड़े देश जूझ रहे हैं। **बुद्ध, महावीर, राम, कृष्ण और गांधी** जैसे महापुरूषों की यह पुण्य-भूमि सदियों से सिद्धान्त, अनुशासन,

सत्य और अहिंसा की राह दुनिया को दिखाने वाले भारत के लिए यह कैसी त्रासदी है कि यहाँ राजनीति के दौर की समाप्ति के साथ ही लुभावने नारे, तुष्टीकरण की नीति, धन, हिंसा, असामाजिक और संदिग्ध चरित्र वाले व्यक्तियों का राजनीति में धड़ल्ले से प्रवेश हो रहा है। राजनीति में अपराधीकरण की प्रवृत्ति दिनोदिन बढ़ती ही जा रही है। भारत जैसे विकासशील देश में अपराधों के नए तौर-तरीकों और तकनीकों का भी दिन-प्रतिदिन विकास होता जा रहा है। सभी दल किसी न किसी मुद्दे पर अपनी राजनीति चला रहे हैं। पिछड़े वर्गो को आरक्षण, मंदिर-मस्जिद विवाद और हिंदुत्व पुनर्जागरण जैसे अनेक मुद्दे प्रमुख हैं। इन मुद्दों पर वे नागरिकों में वर्ग-विभेद, विद्वेष, तनाव जैसी स्थितियाँ पैदा कर रहे हैं।

यदि कोई व्यक्ति मंत्रालय के क्रियाकलापों से अनभिज्ञ होता है, वह मंत्रालय का बॉस बन जाता है (यद्यपि मंत्रालय में अनेक विशेषज्ञ होते हैं) तो बेसिक जानकारी बॉस को भी होनी चाहिए तब ही वह अपने अधिकारियों की बातें समझ सकता है। उसकी बारीकियों को जान सकता है और सभी पर सुचारू रूप से नियंत्रण कर सकता है। यदि वह मंत्री पहले अपराधी रहा है तो समझा जा सकता है उसके निर्णय कितने कल्याणकारी हो सकते हैं और कितने देश और देश की जनता के लिए हितकारी हो सकते हैं। राजनीति में अपराधियों के आ जाने से कोई भी योग्य एवं भद्र पुरूष राजनीति का हिस्सा नहीं बनना चाहता। जब योग्य व्यक्ति सत्ता से बाहर रहेंगे और अपराधी अथवा दबंग लोग सत्ता को संभालेंगे तो देश का बेड़ा गर्क तो होना ही है। इसीलिए आज देश में लोकतान्त्रिक व्यवस्था एक मजाक बन कर रह गयी है। सत्ता और संपत्ति में घालमेल है, यानि दोनों एक दूसरे में परिवर्तित होते रहते हैं। सत्ता का धर्म सामंती होता है। आज पूंजीवादी शक्ति की प्रधानता बढ़ गयी है यानि संपत्ति की प्रधानता बढ़ गयी है और सामंतवादी शक्ति सुप्त अवस्था में चली गई है, इसलिए पूंजीवादी लोकतंत्र पुराने सामंतवाद को कमजोर करने के लिए एक दूसरे को संपत्ति से मदद करते हैं और उसे गुंडों के रूप में इस्तेमाल भी करते हैं, इस अवस्था को **'राजनीति का अपराधीकरण'** कहते हैं, यानि राजनीतिज्ञ सत्ता में बने रहने के लिए अपराध का सहारा लेते हैं। लेकिन कुछ समय बाद यही गुंडे (अपराधी) जब राजनीति में प्रवेश कर सांसद और विधायक बन जाते हैं तो वह अवस्था **'राजनीति का अपराधीकरण नहीं बल्कि अपराधी का राजनीतिकरण'** हुआ। अपराधी भी दो प्रकार के होते हैं एक आर्थिक अपराधी और दूसरा शारीरिक अपराधी और दोनों एक दूसरे के सहयोगी होते हैं। जिस राजनीतिक दल को आर्थिक अपराधी का सहयोग जितना अधिक मिलता है वह उतना ताकतवर होकर आता है। यह अवस्था हमेशा से रही है लेकिन जब से जनता का राजनीतिकरण हुआ है, अपराधीकरण की प्रक्रिया भी तीव्र हुई है।

भारत एक विशाल जनसंख्या वाला देश है जिसे विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र का दर्जा प्राप्त है यानि अप्रत्यक्ष लोकतंत्रात्मक प्रणाली में जनता के सर्वाधिक प्रतिनिधियों का देश। जहाँ जनता अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से शासन करती है। जिसमें प्रतिनिधियों का कार्याकाल 5 वर्ष का होता है। इस अवधि में देश के विकास की कमान इन्हीं के हाथ में होती है। ऐसे में इनका ईमानदार, सचरित्र तथा निष्ठावान (देश के संविधान, संवैधानिक संस्थान, जनता के प्रति) होना परम आवश्यक शर्त है। अन्यथा जिस राजनीति को मानव समाज के कल्याण की व्यवस्था कहा जाता है, वह इसके पतन का कारण बन सकती है। यदि हम राजनीति के इस पक्ष पर नजर डाले जहाँ कानून निर्माता (यानि निर्वाचित जन प्रतिनिधि) ही कानून के सबसे बड़े उल्लंघनकर्ता बन गए हों, तो हमें यह स्थिति आज की तारीख में भयावह दिखाई पड़ती है। **'एसोसिएशन ऑफ डेमोक्रेसी रिफॉर्म'** के रिपोर्ट के अनुसार- देश की सबसे बड़ी पंचायत यानि संसद भवन के 775 सांसदों में 202 अपराधिक पृष्ठ-भूमि के हैं, जिनमें से 92 पर तो हत्या एवं बलात्कार जैसे गंभीर अपराध का मुकदमा चल रहा है। वहीं राज्य विधायिकों में 4032 विधायकों में से 1258 पर अपराधिक मामले हैं जिनमें 596 गंभीर किस्म के हैं। राजनीति के अपराधीकरण की यह प्रवृत्ति कोई नई नहीं हैं पर आज इसमें काफी तेजी और बदलाव आ चुका है। पहले जहाँ अपराधियों का सहारा लेकर चुनाव जीता जाता था, आज वहीं अपराधी चुनाव जीत कर संविधान एवं संवैधानिक संस्थाओं की गरिमा को गिरा रहे हैं। ऐसी स्थिति में लोगों का लोकतंत्र पर से विश्वास उठना स्वभाविक है। जो हमें कम मतदाताओं की उपस्थिति के द्वारा भी संकेत के तौर पर प्राप्त होता है। जोकि लोकतंत्र के लिए एक गंभीर खतरा है क्योंकि यह पुनः राजनीति में अपराधिकरण को ही बढ़ावा देगा।

लोगों और राजनीतिक प्रतिस्पर्धियों के खिलाफ हिंसा का प्रयोग शासक वर्ग और सत्तारूढ़ पार्टी के राजकीय आतंकवाद के अस्त्रागार का एक हिस्सा है, जिसके जरिये जन-विरोध को अपराध करार दिया जाता है और कुचल दिया जाता है। यह पूंजीपतियों की राजनीतिक पार्टियाँ का पसंदीदा तरीका है। अपनी प्रधानता कायम करने व बनाये रखने के लिए तथा लोगों का ध्यान अपनी समस्याओं के असली स्त्रोत से हटाने के लिये ऐसा किया जाता है। हमारे देश में शासन व्यवस्था पर पार्टियों का प्रभुत्व है। यहां कोई भी राजनीतिक पार्टी का गठबंधन चुनावों के जरिये सत्ता में आता है। वह राज्य तंत्र और अपनी वैधानिक व कार्यकारी ताकतों का इस्तेमाल करके पूंजीपति वर्ग के कार्यक्रम को बढ़ावा देती है, उन सब की तिजौरियां भरती है जिन्होंने उसे सत्ता में आने के लिये धन व सहयोग दिया और इसके लिये **भूमि, कुदरती व मानवीय संसाधनों और राज्य कोष** को लूटती है। वह राज्य तंत्र पर अपने नियंत्रण का इस्तेमाल करके अपनी तथा अपने वफादार दलालों व समर्थकों की जेबें भरती है। वह राज्य तंत्र का प्रयोग करके प्रतिस्पर्धी राजनीतिक ताकतों से हिसाब चुकाती है और अपने शासन के खिलाफ हर प्रकार के जन-विरोध को कुचल देती है। इन नापाक इरादों से वह गुंडों द्वारा हिंसा फैलाती है। वह हिंसा और अराजकता फैलाती है। मेहनतकश जनसमुदाय, मजदूर, किसान, छात्र, नौजवान, महिलायें आदि हमेशा इसका शिकार बनते हैं। उन्हें पूरी तरह दर-किनार कर दिया जाता है। आम लोगों के पास कोई साधन नहीं है जिससे वे इन सबको रोक सकें, अपने अधिकारों व आजादियों पर इन हमलों को रोक सकें या अपनी सुरक्षा सुनिश्चित कर सकें।

वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था के चलते, जो पार्टियां सत्ता में आती हैं, वे चुनाव में बहुमत से नहीं अल्पमत से जीतकर आती हैं। वे सभी लोगों का प्रतिनिधित्व करने का दावा करती हैं परन्तु यह मुमकिन नहीं है क्योंकि समाज वर्गों में बंटा हुआ है। राजनीतिक पार्टी की परिभाषा ही यह है कि वह समाज में किसी न किसी वर्ग का प्रतिनिधित्व करती हैं। पूंजीपति वर्ग का चरित्र ही ऐसा है कि वह परस्पर विरोधी हितों में बंटा हुआ होता है, इसलिये उसके हितों का प्रतिनिधित्व करने वाली एक से अधिक पार्टियां होती हैं। **ऐसी पार्टियां राजनीति में अपराधीकरण फैलाये बिना, चारों ओर अराजकता और आतंक फैलाये बिना, कैसे अपना शासन कायम कर सकती हैं और अपना तंग एजेंडा पूरा कर सकती हैं। कांग्रेस पार्टी, भाजपा तथा विभिन्न प्रांतीय पार्टियाँ- सपा, बसपा, द्रमुक, अभाअद्रमुक, शिवसेना, जदयू, माकपा, भाकपा, राजद इत्यादि**- द्वारा फैलाये गये राजनीति में अपराधीकरण से यह स्पष्ट होता है कि यह समस्या किन्हीं एक-दो पार्टियों की नहीं है। इस समस्या की जड़ शासन व्यवस्था पर पार्टियों का प्रभुत्व है। जो सारी पार्टियां खुद सत्ता में आना चाहती हैं, वे हमेशा ही लोगों को आतंकित करने और अपने राजनीतिक प्रतिस्पर्धियों को दबाने के लिये, गुंडों के गिरोह बनाती हैं। इस राजनीतिक व्यवस्था के आधार पर बड़े इजारेदार पूंजीपति जनसमुदाय, पर अपना शासन चलाते हैं और उसे बरकरार रखते हैं। पूरी ताकत सत्तारूढ़ पार्टी और उसके मंत्रीमंडल के हाथों में होती है। आम जनसमुदाय के पास, अपने अधिकारों को सुनिश्चित करने या अपने जीवन को प्रभावित करने वाले फैसले लेने का कोई साधन नहीं होता है।

पिछले 69 वर्षों में भारत इतने अधिक संकट से कभी नहीं घिरा था जितना आज प्रतिदिन घिरता जा रहा है। संकट बाहर के कम, अन्दर के, अपनों के और अपने ही नेताओं द्वारा पैदा किए गए अधिक हैं। देश को राजनीति ने चलाना है और पूरी राजनीति भ्रष्टाचार के शिकंजे में सिसक रही है। सच तो यह है कि बाड़ ही खेत को खा रही है। भ्रष्टाचार और अपराधीकरण से पूरा तंत्र नष्ट हो रहा है। ऐसे मौके पर सर्वोच्च न्यायालय ने एक बहुत बढ़िया निर्णय दिया कि 2 वर्ष से अधिक की सजा प्राप्त करने वाले विधायक और सांसद अपने पद पर नहीं रह सकेंगे। इस निर्णय से लोकतंत्र को साफ करने की एक दिशा मिली थी परन्तु भारत सरकार ने अध्यादेश जारी करके इस निर्णय को रद्द करने की भयंकर भूल की है। राजनीतिक दलों को वोट चाहिए तभी सत्ता प्राप्त हो सकती है परन्तु वोटों के लिए देश को ही दाव पर नहीं लगाया जा सकता। आज देश की राजनीति केवल वोट के लिए ही काम कर रही है। देश का हित किसी को दिखाई नहीं दे रहा। सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के बाद की स्थिति पर राजनीतिक दलों में हलचल हुई थी। राज्य सभा के कांग्रेस सांसद रसीद मसूद जब मंत्री थे तो एम.बी.बी.एस. के प्रवेश में धांधली हुई। उन्हें भ्रष्टाचार का दोषी पाया गया। सजा मिल रही है। 10 हजार करोड़ रूपए के चारा घोटाले में लालू प्रसाद यादव फंसते जा रहे हैं। मैं इस बात के लिए सी.बी.आई; को बधाई दूंगा कि चारा घोटाले में आज लगभग 100 से अधिक अधिकारियों और नेताओं को सजा मिल चुकी है। मुजफ्फरनगर दंगों में 50 निर्दोष मारे गए। उन घरों में हमेशा के लिए अंधेरा हो गया। लगभी 50,000 लोग अपने घरों को छोड़कर टैंटों के नीचे सहमे-सहमे दिन व्यतीत कर रहे है। इतने आतंकित हैं कि अपने घरों को नहीं जा रहे। यह सब अपराधी नेताओं के कारण हुआ। दंगे हुए नहीं, वोट के लिए दंगे करवाए गए। पूरे देश में कई प्रकार के माफिया उभर रहे हैं। कहीं रेत, कहीं बजरी माफिया। कई जगह सरकार नपुंसक होती जा रही है। इन माफिया का ही शासन दिख रहा है। नेताओं को चुनाव में पैसा चाहिए। पैसा इनसे मिलता है। गैर-कानूनी धंधों से माफिया इतने शक्तिशाली हो गए हैं कि उनके आगे स्थानीय सरकार बौनी नजर आने लगी है। अवैध खनन से प्रकृति को इतना छलनी किया जा रहा है कि उत्तराखंड की दुर्घटना कभी भी, कहीं भी घट सकती है। कहीं-कहीं लोकतंत्र माफिया तंत्र बनता जा रहा है।

हमारे देश ने सैकड़ों वर्षों पश्चात् सन 1947 में अंग्रेजी दासत्व से आजादी पाई थी। आजादी के समय देश के समस्त नेताओं ने गाँधी जी के **'रामराज्य'** के स्वप्न को साकार करने का संकल्प किया था परंतु वर्तमान में भारतीय राजनीति का अपराधीकरण जिस तीव्र गति से बढ़ रहा है इसे देखते हुए कोई भी कह सकता है कि हम अपने लक्ष्य से पूर्णतया भटक चुके हैं। देश के समस्त नागरिकों को चाहिए कि वह आत्म-आकलन करे और प्रयास करे कि जो नैतिक मूल्य हम खो चुके हैं उन्हें हम सभी पुन: आत्मसात करें। देश में सभी ओर '**कालाबाजारी, रिश्वतखोरी, भ्रष्टाचार, भाई-भतीजावाद, जातिवाद व सांप्रदायिकता**' का जहर फैल रहा है। एक सामान्य कर्मचारी से लेकर शीर्षस्थ नेताओं तक पर भ्रष्टाचार संबंधी आरोप समय-समय पर लगते रहे हैं। देश की राजनीति में अपराधीकरण दिन-प्रतिदिन बढ़ रहा है। कुर्सी अथवा पद की लालसा में मनुष्य सभी नैतिक मूल्यों का उपहास उड़ा रहा है। **'येन-केन-प्रकारेण'** वह इसे हासिल करने का प्रयास करता है। स्वतंत्रता के पश्चात् जिस तरह से कुर्सी के लिए जीतोड़ संघर्ष आरंभ हुआ, सभी दल अपना-अपना वर्चस्व स्थापित करने के लिए साधनों की पवित्रता के गाँधीवादी दृष्टिकोण को नकारने लगे, उसने राजनीति एवं अपराध के गठजोड़ को बनाने में अग्रणी भूमिका निभाई। हमारी भारतीय राजनीति में धन व शक्ति का बोलबाला है। एक आकलन के अनुसार सामान्यत: 90 प्रतिशत से भी अधिक हमारे नेतागण या तो अत्यधिक धनाढ्य परिवारों से होते हैं अथवा उनका संबंध अपराधी तत्वों से होता है। गुणवत्ता कभी भी हमारी चुनाव प्रक्रिया को आधार नहीं रहा है। यही कारण है कि योग्य व्यक्ति आगे नहीं आ पाते हैं और यदि आते भी हैं तो धन शक्ति का अभाव उन्हें पीछे खींच लेता है। इन परिस्थितियों में वे स्वयं को राजनीति से पूर्णतया अलग कर लेते हैं। परिणामत: राजनीति में वे लोग आते हैं जिनमें स्वार्थपरता की भावना देश के प्रति प्रेम की भावना से कहीं अधिक होती है। ऐसे लोग ही हमारी जड़ों का दीमक की भाँति खोखला करते हैं। एक सामान्य सी बात है कि किसी कार्यालय अथवा विभाग का शीर्षस्थ अधिकारी ही अयोग्य, भ्रष्ट अथवा अपराधी प्रवृत्ति का होगा, तब इन परिस्थितियों में प्रशासन को स्वच्छ रखना अत्यधिक दुष्कर कार्य हो जाता है। हमारी राजनीति की विडंबना भी कुछ इसी प्रकार की है।

सुप्रीम कोर्ट से जमानत रद्द होते ही पूर्व सांसद मोहम्मद शहाबुद्दीन को बिहार के सीवान में आत्मसमर्पण करना पड़ा, जहां से उसे फिर जेल भेज दिया गया। माफिया से नेता बने इस व्यक्ति पर करीब पचास अपराधिक मामले दर्ज हैं। पटना हाईकोर्ट ने तीन

हफ्ते पहले उसे हत्या के एक मामले मे जमानत दे दी थी, जिसके बाद वह जेल से बाहर आ गया था। सुप्रीम कोर्ट ने शहाबुद्दीन की जमानत रद्द करके उन लोगों को सख्त संदेश दिया है, जो राजनीति संरक्षण देकर अपराधियों को बचे रहने में मदद करते हैं। गौरतलब है कि सीवान निवासी दो भाइयों की तेजाब से नहला कर हत्या करने के जुर्म में शहाबुद्दीन को उम्रकैद की सजा हो चुकी है। इस मुकद्दमें के मुख्य गवाह और तीसरे भाई राजीव रोशन की भी हत्या कर दी गई थी, जिसमें शहाबुद्दीन अव्वल मुल्जिम है। इसी मामले में पटना हाइकोर्ट ने सात सितंबर को जमानत दे दी थी, जिसके बाद वह जेल से बाहर आ गया था। जमानत के बाद शहाबुद्दीन ने सैकड़ों गाड़ियों का जिस तरह से काफिला निकाला, उससे लोग दंग रह गए। मीडिया में भी इस प्रकरण को लेकर काफी-हो-हल्ला हुआ। सबसे असहज करने वाली जो जानकारी बाहर आई, वह थी जमानत के दौरान राज्य सरकार की तरफ से कमजोर पैरवी की। यह समझते देर नहीं लगी कि बिहार सरकार में शामिल राष्ट्रीय जनता दल के दबाव के कारण अभियोजन पक्ष ने अपनी पैरवी में कोताही बरती होगी। जेल से निकलने पर मुख्यमंत्री नीतीश कुमार को लेकर की गई शहाबुद्दीन की टिप्पणियों ने भी आग में घी का काम किया। देखते-देखते यह मामला राष्ट्रीय मीडिया में छा गया। आखिरकार मारे गए तीनों भाइयों के पिता की तरफ से मशहूर वकील और समाजसेवी प्रशांत भूषण ने सुप्रीम कोर्ट में शहाबुद्दीन की जमानत रद्द कराने के लिए याचिका दाखिल की। इसके बाद बिहार सरकार ने भी पटना हाइकोर्ट से मिली शहाबुद्दीन की जमानत को निरस्त करने के लिए अपील की थी। भूषण ने स्पष्ट किया कि शहाबुद्दीन जेल से छूटने के बाद किसी भी नियम-कानून को नहीं मान रहा है। एक पत्रकार के हत्याकांड मामले में अभी गवाही तक नहीं हुई है। उसका बाहर रहना ठीक नहीं। सुप्रीम कोर्ट ने बिहार सरकार को इस बात के लिए फटकार भी लगाई कि जब हाइकोर्ट में जमानत पर सुनवाई हो रही थी, तब राज्य सरकार कहां सो रही थी। अदालत ने राजीव रोशन हत्याकांड की सुनवाई तेज करने के निर्देश भी निचली अदालत को दिए हैं। इस पूर मामले में राष्ट्रीय जनता दल के दबाव के चलते नीतीश कुमार को अपनी छवि का नुकसान उठाना पड़ा है। सुप्रीम कोर्ट ने अपने आदेश में स्पष्ट कर दिया था कि आरोपी या तो खुद आत्मसमर्पण करे या बिहार पुलिस उसे हिरासत में ले। मुजरिम ने आत्मसमर्पण का रास्ता चुना हालांकि साथ ही उसने धमकी भी दे डाली कि उसके समर्थक नीतीश सरकार को सबक सिखाएंगे। शहाबुद्दीन की जमानत रद्द होना समाज के लिए राहत की बात है। इंसाफ की जीत है। **पर शहाबुद्दीन राजनीति की आड़ लेने वाला अकेला माफिया नहीं है न पार्टी के तौर पर राष्ट्रीय जनता दल अपवाद है। इसलिए यह असल सवाल अपनी जगह कायम है कि राजनीति का अपराधीकरण कैसे खत्म होगा।**

हिंदुस्तान की सियासत आज जिस ढर्रे पर चल रही है वह भ्रष्टाचार और अपराध से लबालब है। चुनाव में बढ़ता धनबल, बाहुबल और अपराधीकरण लोकतंत्र को अंदर ही अंदर खा रहा है। जब कानून के निर्माता और रखवाले ही अपराध में सने होंगे तो उनसे कैसे उम्मीद की जा सकती है कि लोकतंत्र को स्वस्थ रख सकेंगे। **'एसोसिएशन ऑफ डेमोक्रेटिक रिफॉर्म'** की मानें तो पंद्रहवीं लोकसभा में 543 सांसदों में से 162 पर गंभीर मामले दर्ज थे और सोलहवीं लोकसभा में इनकी संख्या और भी बढ़ गई। इसका एक बड़ा कारण जनप्रतिनिधित्व कानून का लचीला होना भी है। **सन् 2006 में चुनाव आयोग ने देश के तत्कालीन प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह को एक पत्र लिखा। उस पत्र में गया था कि यदि जनप्रतिनिधित्व कानून 1951 में जरूरी बदलाव नहीं किए गए तो वह दिन दूर नहीं जब देश की संसद और विधानसभाओं में दाऊद इब्राहीम और अबू सलेम जैसे लोग बैठेंगे। 'हम्मान में सभी नंगे हैं'** की तर्ज पर सभी राजनीतिक पार्टियों की गोद में ऐसे अनेक नेताओं की किलकारियां गूंजती हैं जो अपराध में गले तक डूबे हैं। सोहलवीं लोकसभा के चुनाव प्रचार में मोदीजी अपने भाषणों में कहा करते थे कि उनकी पार्टी में या तो वे रहेंगे या ऐसे लोग जिन पर किसी भी प्रकार के मुकदमें दर्ज हैं। तब एक उम्मीद जगी थी कि शायद अब राजनीति में फिर से शुचिता का उदय होगा लेकिन सत्तानर्शी होने के बाद भाजपा के कुनबे में तो छोड़िए, मोदीजी ने अपने मंत्रीमंडल में ही ऐसे अनेक नगीनों का शुमार कर लिया जिनमें से कइयों पर संगीन आरोप हैं। नेताओं और अपराधियों की दिनोंदिन बढ़ती सांठगांठ चिंतित करने वाली है। वैसे सितंबर 2013 में सर्वोच्च न्यायालय ने मतदाताओं को नापसंदगी का हक देकर एक ठोस पहल की थी। हालांकि चुनाव सुधार के लिए **तारकुंडे समिति, गोस्वामी समिति, वोहरा कमेटी** जैसी अनेक समितियों ने अपनी सिफारिशें सरकार को सौंपी हैं लेकिन निजी हितों के कारण किसी भी दल ने इन्हें लागू करने की जहमत नहीं उठाई। आज जरूरत व्यापक चुनाव सुधार की है जिससे राजनीति में बढ़ते अपराधीकरण को रोका जा सके। इसके लिए पार्टियों को मजबूत राजनीतिक इच्छाशक्ति दिखानी होगी। हमारी कानून-व्यवस्था में भी त्वरित सुधार की आवश्यकता है। इस व्यवस्था में अनेक कमजोर कड़ियाँ हैं, अनेकों भ्रष्ट नेताओं पर आरोप लगते रहे हैं परंतु आज तक शायद ही किसी बड़े नेता को सजा के दायरे में लाना संभव हुआ हो। वे अपने पद, धन अथवा शक्ति के प्रभाव से स्वयं को आजाद करा लेते हैं तथा स्वयं को स्वच्छ साबित करने में सफल हो जाते हैं। देश के लिए यह अन्यंत दुर्भाग्यपूर्ण है कि स्वतंत्रता के छः दशकों बाद भी हमारी राजनीति का आधार जातिवाद, क्षेत्रीयवाद तथा भाई-भतीजावाद है। आज भी अधिकांश नेता इसी आधार पर चुनाव जीत कर राजनीति में आते हैं। ये लोग जनमानस की इस कमजोरी का पूरा लाभ उठाते हैं।

देश का सबसे बड़ा दुर्भाग्य क्या होगा कि जिन कारणों से हम सैकड़ों वर्षो तक विदेशी ताकतों के अधीन रहे, लाखों लोगों ने कुर्बानियाँ दी इसके पश्चात् भी हम अपने अतीत से नहीं सीख सके और यही दशा यदि अनवरत बनी रही तो वह दिन दूर नहीं जब संकट के काले बादल पुनः हमारे भाग्य को अपनी चपेट में ले लें।अतः यह अत्यंत आवश्यक है कि सभी धर्म, जाति, संप्रदाय, क्षेत्र व भाषा के लोग एकजुट होकर भारतीय राजनीति में बढ़ते अपराधीकरण पर अंकुश लगाएँ। मतदान के अपने अधिकार का उपयोग पूर्ण विवके से तथा देश के हित को ध्यान में रखते हुए करें।यदि हम सभी का नैतिक दायित्व है कि हम देशहित को ही सर्वोपरि रखें तथा उन समस्त अलगाववादी ताकतों का विरोध करें जो देश में पृथकता का वातावरण उत्पन्न करती हैं तथा हमारी राष्ट्रीय एकता की जड़ों को कमजोर करती हैं। हम सब मिलकर प्रयास करें कि अपने देश को कुछ ऐसा बनाएँ ताकि निम्नलिखित पंक्तियाँ साकार हो सकें।

"वह सपनों का देश, कुसुम ही कुसुम जहाँ खिलते हैं।

उड़ती कहीं न धूल, न पक्ष में कंटक ही मिलते हैं।"

राजनीतिज्ञ एक बारगी वोटों की वैतरणी पार कर ले और सरकारी कर्मचारी एक बार किसी तरह नियुक्ति भर पा जाएं फिर तो वे जनता के और देश के मालिक बन जाते हैं और वी.आई.पी. बनकर विशेष सुख-सुविधाओं को हकदार, कानून से ऊपर और जनता से अलग विशिष्ट वर्ग के व्यक्ति बन जाते हैं। वस्तुत: कहा जा सकता है कि राजनीतिक दलों को ही आत्ममंथन करना होगा। हर तरह की धोखाधड़ी और हिंसा के लिए उन पर उंगली उठती है। लोकतान्त्रिक राजनीति में राजनीतिक दल तो होंगे ही। वे आचरण संहिता का पालन कर हिंसा व अपराध घटा सकते हैं।यदि ऐसा न हुआ तो भविष्य का जो आलेख प्राचीर पर लिखा है वह सभी को पद लेना चाहिए कही राजा भोज, कहाँ गंगू तेली, पर जब दोनों ही देश की स्थितियों और शासकों, प्रशासक के क्रियाकलाप के विषय में एक से चिन्तित ओर क्षुब्ध हो, एक-सी बाते कहने लगें तो स्पष्ट कि संकट काफी गहरा है।राष्ट्र स्तरीय विशेष अवसरों पर भ्रष्टाचार, राजनीति के अपराधीकरण साम्प्रदायिकता और जातिवाद की बुराइयों को रेखांकित किया जाता है, उत्साही नागरिकों, प्रेस और न्यायपालिका से इन्हें जड़ से उखाड़ फेंकने के लिए सहयोग का आह्वान भी किया जाता है। वास्तव में इसके लिए जिम्मेदार कौन है। कौन जानता था कि गांधी, नेहरू, पटेल और मौलाना आजाद के बाद देश को आपातकाल देखना पड़ेगा और तत्पश्चात् घोटाले पर घोटाले देश की नियति बन जायेंगे कौन जानता था कि संविधान द्वारा सुनिश्चित धर्मनिरपेक्षता एक दिन साम्प्रदायिकता एवं जातिवाद का शिकार हो किताबी पन्नों में बंद होकर रह जायेगी? कौन जानता था कि उनकी पीढ़ी के बाद के राजनेताओं में कोई नेहरू, पटेल अथवा मौलाना आजाद नहीं उभर पायेगा?

राजनीति में आने और उसमें आगे बढ़ने की ज्यादातर कहानियां ऐसे महत्वाकांक्षी, दुराग्रही, निर्लज्ज तथा अपराध मानोवृत्ति वाले नायकों का चरित्र उपस्थित करती है, जो अपने कारनामों से किसी आदर्श की याद नहीं दिलाते। हां, वैभवग्रस्त और रूग्ण मानसिकता वाले एक क्रूर अमानुष की छवि जरूर उभरती है, जो किसी के लिए भी दु:स्वप्न सरीखी होती है। सामाजिक जीवन में प्रतिमानो की इस प्रकार की गिरावट आम आदमी में हताशा और बेचैनी को जन्म दे रही है, जो स्वस्थ लोकतंत्र के मार्ग में एक बड़ी बाधा है। इसके चलते लोग राजनीतिक प्रक्रिया में भाग न लेकर विरक्त से होते जा रहे हैं। देश का अपराधी वर्ग जिस ढंग से राजनीति में प्रवेश कर रहा है यदि उसे न रोका गया तो हमारी संसद बदनाम अपराधियों का अड़ा बन जाएगी। सच तो यह है कि आजादी से पहले जनसेवा के लिए स्वच्छ छवि वाले लोग ही राजनीति में आते थे। राजनीति उनके लिए समाजसेवा का माध्यम हुआ करती थी। आजादी के बाद नैतिकता का तेजी से ह्रास हुआ है। आज राजनीति रातों-रात धनवान बनने का एक सशक्त साधन बन गई है। राजनीति के अपराधीकरण के लिए सभी पार्टियां दोषी हैं। आज चुनाव लड़ने के लिए उम्मीदवार तय करते समय उसके चरित्र को नहीं देखा जाता बल्कि पार्टी टिकट पाने का आधार उसकी धन-दौलत और जीत पाने की क्षमता ही रह गई है। वास्तव में राजनीतिक हिंसा के रूप ने ही चुनावी प्रणाली को आपराधिक बनाया है। इस संबंध के पीछे राजनीतिक लाभ, शक्ति एवं अंधाधुंध आर्थिक लाभ की चाह है। जब तक यह भाव समाप्त नहीं होता, राजनीतिज्ञ नहीं बदलेंगे। खासकर तब तक जब तक सिर्फ बैलेट बॉक्स ही सत्ता प्राप्ति की कुंजी हो। राजनीतिज्ञों और अपराधियों के गठजोड़ का पहला चरण वह है जब राजनीतिज्ञ अपराधियों का इस्तेमाल लोगों को धमकाने में, बूथ कैच्चरिग आदि के लिए इस्तेमाल करते हैं जिससे कि वे सत्ता प्राप्ति के अपने लक्ष्य को पा सकें। इटली इस प्रकार के राजनीतिज्ञ-अपराधी गठजोड़ के लिए अब तक कुख्यात रहा है। जापान व अमरीका में भी इस प्रकार की बातें होती हैं लेकिन इन देशों में इन बातों से निपटने की क्षमता व इच्छा शक्ति भी उतनी ही स्पष्ट दिखाई देती है। आज की विषम परिस्थिति में जब लोकतंत्र मुट्ठी भर धन कुबेरों के हाथों की कठपुतली बनता जा रहा है और राजनेता हास्यापद ढंग से गैर जिम्मेदार और निर्लज्जतापूर्वक धनार्जन पर पिल पड़े हैं, देश के बुद्धिजीवियों को मूकदर्शकों की भूमिका छोड़कर सक्रिय रूप से बढ़ना होगा। बहुदलीय लोकतंत्र की रक्षा और सवर्धन के लिए आवश्यक है कि बुद्धिजीवी आगे जाएँ और छोटे-छोटे निजी स्वार्थो के आपसी टकराव से ऊपर उठकर सकारात्मक भूमिका तथा इस चुनौती को एक अवसर के रूप में ग्रहण करें। राजनीतिक जगत में प्रदूषण को कम करने के लिए आवश्यक शुद्धि का प्रयास खतरनाक भी होगा। इससे छोटे-छोटे सुख और आराम में खलल पड़ेगी। पर इस खतरे को मोल न लेने के परिणाम कहीं और भी ज्यादा भयंकर खतरनाक होंगे।

इसलिए यह जरूरी है कि अपराधीकरण का मुकाबला करने के लिए जनमत और उन लोकतान्त्रिक संस्थाओं को मजबूत किया जाए जिनका दबाव पूरी व्यवस्था पर पड़े। इन संस्थाओं में राजनीतिक दल हैं, पुलिस, नागरिक प्रशासन, न्यायपालिका, समाचार पत्र और पंचायती राज संस्थाएं भी हैं। यदि जर्मनी की तरह यहां भी राजनीतिक दलों के नियमन के लिए विधि बन जाए कि एक न्यायिक आयोग यह देख-रेख करेगा कि सदस्यता भर्ती भी उनके अपने-अपने संविधानों के आधार पर हो और नियमित रूप से नीचे से ऊपर तक लोकतांत्रिक चुनाव भी हों, उम्मीदवारों का चयन भी संबंधित स्तरों पर निर्वाचित समितियाँ करें तो यह प्रथा खत्म हो सकती है। उनके व्यय और सम्पति का भी सार्वजनिक और निष्पक्ष उल्लेख होगा तो और कमियां भी दूर होंगी। नेताओं और सरकारी अफसरों के संबंध में यह कानून बनाया जा सकता है कि वे प्रतिवर्ष- अपनी सम्पति का ब्यौरा घोषित करें और कोई न्यायिक प्राधिकरण उसकी जांच करे। समाचार पत्रों-पत्रिकाओं और आकाशवाणी-दूरदर्शन और चित्रपट का जनता की सोच पर भारी प्रभाव पड़ने लगा है। उनको सभी प्रकार के सरकारी नियंत्रणों और दबाव से तो मुक्त कराना जरूरी ही है, किन्तु यह प्रबंध भी करना होगा कि वे अपराधों, हिंसा और दूराचारों को अति सम्मोहक तौर पर प्रस्तुत न करें। सरकारी तौर पर नियंत्रण लाये बिना भी इसे दूर करने के उपाय तलाशने होंगे। खासकर विदेशी सामग्री के प्रसार पर भी ध्यान देना होगा।

राजनीति के इस अपराधीकरण को रोकने हेतु सर्वोच्च न्यायालय ने कई प्रयत्न किए जैसे 12 जनवरी, 2005 के अपने फैसले में सुधार करते हुए- 10 जुलाई 2013 को जनप्रतिनिधि कानून की धारा 8 की उपधारा (4) में सुधार किया जिसके तहत अदालत द्वारा दोषी सिद्ध 2 वर्ष या उससे अधिक के सजा प्राप्त उन प्रतिनिधि की अब अपनी सदस्यता का त्याग करना होगा। सर्वोच्च न्यायालय का यह फैसला राजनीति में बढ़ते अपराधी प्रवृत्ति पर रोक में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। परन्तु इस फैसले के गलत शिकार कई मेहनती समाजसेवी राजनीतिक कार्यकर्ता भी हो सकते हैं। इसीलिए राजनीतिक दलों ने जनप्रतिधि कानून में सुधार का निर्णय किया। इसीलिए अब जनता को जागरूक होकर सर्वोच्च न्यायालय के कदम से कदम मिलाकर आगे बढ़ते हुए राजनीति के अपराधीकरण पर लगाम लगाने का प्रयास करना होगा। सूचना के अधिकार के दायरे में राजनीतिक दलों को लाने का मैं समर्थन करता हूं। राजनीतिक दल सब जगह पारदर्शिता चाहते हैं परन्तु स्वयं सब कुछ छिपा कर रखना चाहते हैं। राजनीति में काले धन के प्रयोग को रोकने की जरूरत है। पूरे चुनाव कानून में सुधार किया जाए। धन का प्रयोग कम हो। काले धन के प्रयोग पर सजा दी जाए। 10 करोड़ रूपए से अधिक कमाने वाली कम्पनियों पर विशेष कर लगाया जाए और वह धन राजनीतिक दलों को चुनाव लड़ने के लिए दिया जाए। जब तक राजनीति से कालेधन का प्रभाव समाप्त नहीं होता तब तक राजनीति साफ-सुथरी नहीं हो सकती। गोपीनाथ मुंडे ने एक सच कहा कि उन्होंने चुनाव में 10 करोड़ खर्च किए हैं। एक कांग्रेस नेता ने कहा कि 100 करोड़ रूपए में राज्यसभा की सीट जीती जा सकती है। जो अन्दर की सच्चाई जानते हैं उन्हें पता है कि स्थिति प्रतिदिन खराब हो रही है। यदि सूचना के अधिकार के दायरे में राजनीतिक दल आ जाएं तो उन्हें चुनाव में होने वाले खर्च का हिसाब देना पड़ेगा। आज सारा हिसाब काला है। इसी कारण उस निर्णय से सभी दल घबराए। उसे रद्द करने के लिए इकटठे हो गए पर वह इलाज नहीं है। नियम कानून बदलें और राजनीति को कालेधन से मुक्त करें। अत: तथ्यों से यह स्पष्ट हो रहा है कि वर्तमान में राजनीति किस हद तक पतित हो चुकी है तथा नेतागण कितने स्वार्थी और चरित्रहीन हो गए हैं। राजनीति में बढ़ते अपराध का कारण यह नहीं है कि राजनीतिक दलों में दुर्जन सक्रिय हैं बल्कि सज्जन (जनता) ही निष्क्रिय हैं।

आज हमें एक नयी, वैकल्पिक राजनीतिक व्यवस्था की जरूरत है, जिसमें लोग सत्ता में होंगे। हमें एक ऐसी राजनीतिक व्यवस्था की जरूरत है जिसमें राजनीतिक सत्ता मजदूर-मेहनतकश के हाथ में होगी। सत्ता को अपने हाथ में रखने के लिये, लोगों को एक ऐसी राजनीतिक प्रक्रिया की जरूरत है, जिसमें लोग अपने बीच में से उन राजनीतिक प्रतिनिधियों का चयन और निर्वाचन कर सकेंगे, जो पूरे समाज के हितों की हिफाजत करेंगे, लोग अपने राजनीतिक प्रतिनिधियों पर नियंत्रण रख सकेंगे और अगर प्रतिनिधि जनमत का उल्लंघन करता है तो उसके पद से हटा भी सकेंगे। अपने हाथ में राजनीतिक सत्ता लेकर, लोग उन फैसलों को ले सकेंगे और लागू कर सकेंगे, जिनसे समाज के सभी तबकों की, पारस्परिक सामंजस्य के साथ, खुशहाली और सुरक्षा सुनिश्चित होगी। इस नयी व्यवस्था में लोग समाज का कार्यक्रम तय करेंगे और राजनीतिक पार्टियों की भूमिका होगी यह सुनिश्चित करना कि व्यवस्था लोगों को सत्ता में रहने में सक्षम बनाये। जनता यह आशा लगाए बैठी है कि कोई चमत्कार या महापुरूष इस समस्या से निजात दिला देगा, लेकिन यह उसका भ्रम है, क्योंकि जब तक जनता स्वयं सक्रिय नहीं होगी तब तक समाज में दुर्जनों का बोलबाला बना रहेगा। इस समस्या का समाधान सिर्फ जनता के हाथ में है। यह अलग बात है कि वह इसके लिए कब तक तैयार होगी।

कुछ महत्वपूर्ण कदम उठाने आवश्यक हैं। प्रत्येक विधायक, सांसद या पार्षद के प्रत्याक्षी बनने के लिए न्यूनतम शैक्षिक योग्यता निर्धारित की जाए, तत्पश्चात जो जनप्रतिनिधि सरकार के हिस्सा बनते हैं अर्थात मंत्री, अथवा प्रधानमंत्री उनकी शैक्षिक योग्यता उनके कार्यभार के अनुरूप निर्धारित की जाए। एक अन्य महत्व पूर्ण कदम के तौर पर जनता को उसके वोट की कीमत का ज्ञान कराया जाए, सत्ता में उसकी भागीदारी का महत्व समझाया जाए कि चुनाव प्रक्रिया में उसकी लापरवाही या अवहेलना, लालच करना स्वयं उसके भविष्य के लिए कितनी खतरनाक हो सकती है। अन्यथा देश में लोकतान्त्रिक व्यवस्था से जनता को कोई भी लाभ मिलने वाला नहीं है, पहले विदेशी जनता का शोषण करते थे अब देसी नेता जनता को लूटते रहेंगे और उसका शोषण करते रहेंगे। दुर्भाग्यवश राजनीति एक ऐसा विषय है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति स्वयं को विशेषज्ञ मानता है। राजनीति सत्ता में पहुंचने का एक जरियाहै, एक रास्ता है। सत्ता का धर्म है निरंकुश होना, यानि सत्ता निरंकुश हुए बिना शासन कर ही नहीं सकती है, इसलिए निरंकुशता ही अपराध है। कहने का मतलब यह है कि राजनीति जब से लोगों के दिमाग में आई, तब से अपराध उसका अभिन्न अंग बन गया।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. अग्रवाल, प्रमोद कुमार: भारत के विकास की समस्याएं और समाधान, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद-1997
2. विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित लेख एवं विशेषज्ञों के साक्षात्कार से संकलित सामग्री।
3. कौर, सुरजीत: राजनीतिक आतंकवाद के लिए साम्राज्यवाद अपराधी, लोक साहित्य, प्रकाशन, लखनऊ-1986
4. गुप्ता, कमलेश: लोक प्रशासन (सम-सामयिक मुद्दे) कल्पना प्रकाशन, दिल्ली-2013

5. शर्मा, देवेन्द्र प्रसाद: भारतीय जनता पार्टी और गांधी विचारधारा तीसरे विकल्प की तलाश, एटलांटिक पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली - 2003

6. त्रिपाठी, ममता मणि: समकालीन भारतीय राजनीति के मुद्दे समस्या एवं समाधान, भारती पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, फैजाबाद (उ.प्र.) 2013

7.. शर्मा, नीता: संविधान का विश्वकोश: अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली।

8.. दैनिक भास्कर, दैनिक जागरण, जनसत्ता, पंजाब केसरी, अमर उजाला, दैनिक ट्रिब्यून आदि समाचार पत्रों के संपादकीय आलेख।

9.. पांञ्चजन्य, कामदनी, रसरंग, इण्डिया टुडे, तहलका, सरिता, आउटलुक आदि पत्रिकाओं से प्राप्त अध्ययन सामग्री।

10.. रूपा, मंगलानी: भारतीय शासन एवं राजनीति, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर 2007

11. तिलक, रघुकुल: लोकतंत्र: स्वरूप एवं समस्या, हिंदी ग्रंथ अकादमी, उत्तरप्रदेश, लखनऊ।

12. मिश्र, सच्चिदानंद: सांविधानिक अपेक्षाएं एवं दलीय संस्कृति।

13. जैन, श्रीमती राजेश: भारतीय राजनीति के नए आयाम, विश्व भारती पब्लिकेशन्स।

14. पामर, नार्मल, डी: दि इण्डियन पॉलिटिकल सिस्टम, जार्ज एलेन एंड अनविल लि., लंदन।

15. राय व त्रिवेदी, आर.एन.: भारतीय सरकार एवं राजनीति, कालेज बुक डिपो, जयपुर।

16. जोंस, मोरिस: गर्वमेंट एंड पॉलिटिक्स ऑफ इंडिया, हचिसन एंड कंपनी, लंदन, 1967

17. कोठारी, रजनी: पॉलिटिक्स इन इंडिया, ओरिएन्ट लॉगमैन बंबई, 1970

18. जैन, श्रीमती राजेश: भारतीय राजनीति के नए आयाम, विश्व भारती पब्लिकेशन्स।

19. मधुलिमये: भारतीय राजनीति में अन्तविरोध।

20. आहूजा, राम: सामाजिक समस्याएं: रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर

21. सोमरा, कर्णसिंह: साम्प्रदायिक सदभाव एवं राजनीतिक चेतना, प्रिन्टवेल, जयपुर - 1992

22. गजराज, पदम सिंह: चेतना गुजरात: भारतीय राजनीति राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय मुद्दे और चुनौतियां, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली - 2014

23. टंडन, बिशन: जनतंत्र और प्रशासन, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली - 2009

24. सिंह, महेश्वर: भारतीय लोकतंत्र समस्याएं व समाधान, साहित्यगार, जयपुर - 2000

25. दुबे, एम.पी.: धर्मनिरपेक्षवाद और भारतीय प्रजातंत्र, नेशनल पब्लिकेशिन हाउस, नई दिल्ली

26. पाण्डेय, अरूण: हमारा लोकतंत्र और जानने का अधिकार, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली - 2000

27. सुधा, खुशबू :धर्म राजनीति एवं मूल्यहीनता, पोइंटर पब्लिशर्स, जयपुर - 1999

28. राय, अरूंधति: कठघरे में लोकतंत्र, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली - 2012

29. सेंगर, शैलेन्द्र: भारतीय लोकतंत्र के समक्ष चुनौतियां, गुंजन प्रकाशन, नई दिल्ली - 2009

30. गोस्वामी, भालचन्द्र: विधि और सामाजिक न्याय अभिषेक पब्लिकेशन्स, चण्डीगढ़ - 2012

31. प्रियंवद: भारतीय राजनीति के दो आरव्यान, हिंद पॉकेट बुक्स, नई दिल्ली - 2005